3. 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात'

प्रतिभाशाली व्यक्तियों के लक्षण बचपन से ही प्रकट होने लगते हैं। चंद्रगुप्त भी बचपन से ही राजा बनने का स्वप्न देखते थे। राजा के योग्य प्रतिभा और गुण बचपन से ही उनके आचरण और व्यवहार में दिखाई देने लगे।

गंगा के किनारे, दूर-दूर तक हरे-भरे खेत फैले हुए थे। धान की बालियाँ प्रकृति की हरीतिमा को और अधिक बढ़ा रही थीं। बरगद के पेड़ के नीचे ऊँचे टीले को सिंहासन बनाकर गाँव के बच्चे 'राजा-राजा' खेल रहे थे। एक बालक ऊँचे टीले पर राजा बनकर बैठा था। उसके आस-पास आठ-दस मित्र दरबारी, मंत्री एवं सैनिक बनने का अभिनय कर रहे थे। भरी दोपहरी में बच्चों का खेल खूब जम रहा था। सभी बालक अभिनय में बड़े कुशल जान पड़ते थे।

दस वर्षीय बालक चंद्रगुप्त, जो राजा बना बैठा था, उसकी आवाज़ बड़ी रोबीली थी। उसने मंत्री बने मित्र विशाख से पूछा– ''क्या हमारे राज्य में प्रजा सुखी है?''

मित्र-मंत्री – "जी महाराज! प्रजा आपका गुणगान कर रही है, किसी को कोई कष्ट या अभाव नहीं है।"

चंद्रगुप्त– मंत्री जी!

मित्र-मंत्री– आज्ञा हो, महाराज!

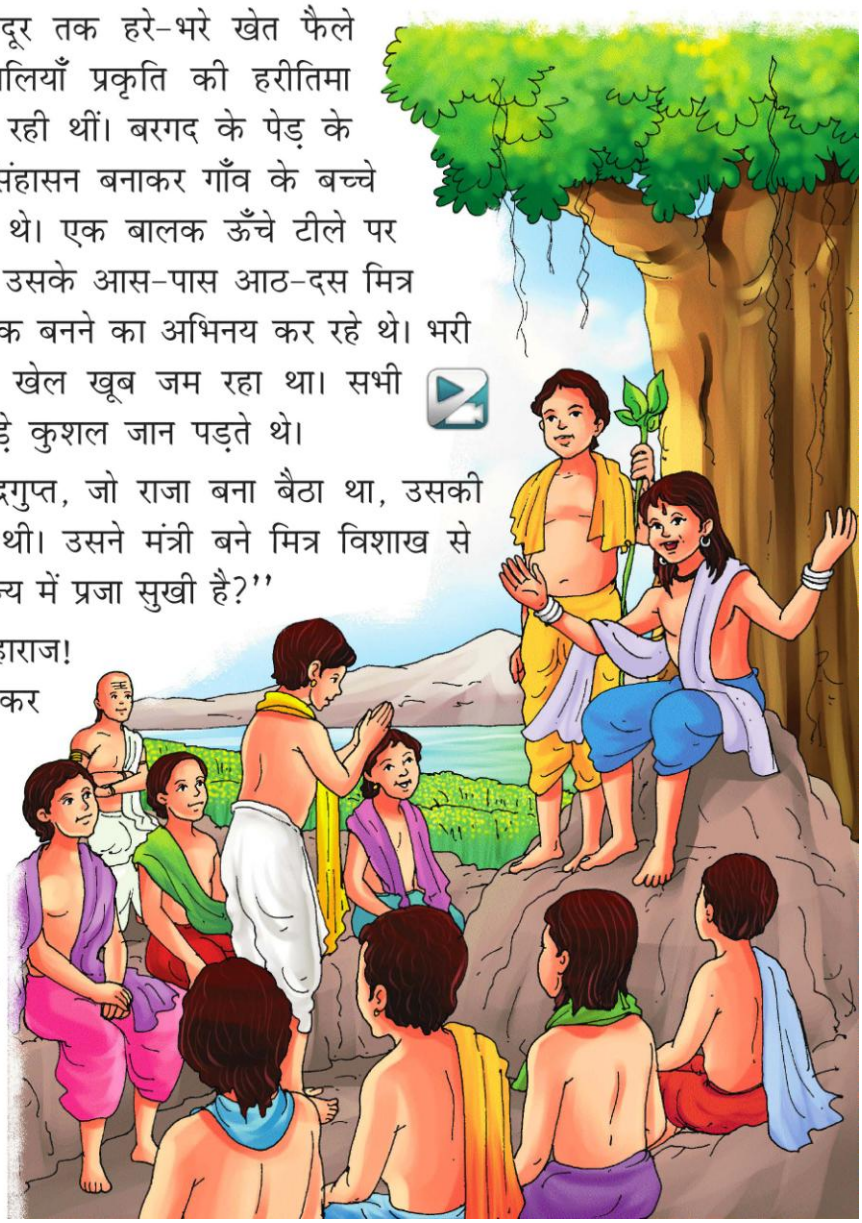

चंद्रगुप्त– अब मगध का शासन मेरे हाथों में आ गया है। मेरी प्रजा में किसी को अभाव, दुख या कष्ट नहीं होना चाहिए। किसी के साथ अन्याय नहीं होना चाहिए। राज्य का कोष गरीबों के लिए खुला रहना चाहिए। मेरी प्रजा में कोई दरिद्र नहीं रहना चाहिए। इसका विशेष ध्यान रखा जाए।

मित्र-मंत्री – जो आज्ञा, महाराज!

सभासद का अभिनय करने वाले सभी मित्र एक साथ बोल उठे–महाराज की जय हो।

बच्चे अपने नाटक में व्यस्त थे और वहीं कुछ दूरी पर बैठे एक चोटी वाले ब्राह्मण, जिनका नाम चाणक्य था, बच्चों का खेल देखकर आनंदित हो रहे थे। वे चंद्रगुप्त की आवाज़ और बातों से बड़े प्रभावित हुए। उन्होंने पास आकर चंद्रगुप्त को मगध का शासक बनने का आशीर्वाद दिया। बच्चे खेल समाप्त करने के पक्ष में नहीं थे इसलिए उन्हें भी नाटक का एक पात्र बना लिया और उनसे आग्रह करने लगे कि वे महाराज से कुछ माँगें। चाणक्य भी बच्चों की खेल-मंडली में शामिल हो गए और राजा बने चंद्रगुप्त से एक दूध देने वाली गाय माँगी। चंद्रगुप्त ने उनका सम्मान करते हुए उन्हें आसन (दूसरे ऊँचे टीले) पर बैठाया। चंद्रगुप्त बोले, "ब्राह्मण देवता! आप एक नहीं, दस गायें लीजिए। सोना, चाँदी, हीरे जवाहरात माँगिए। मेरे राज्य में किसी चीज़ की कमी नहीं है। मैं यही चाहता हूँ कि मेरी प्रजा में ब्राह्मण एवं गुरुजन सुखी और संपन्न रहें।"

चाणक्य उसकी वाक्पटुता और कुशल नेतृत्व क्षमता से बहुत प्रभावित हुए। वे राजा नंद के दरबार से अपमानित होकर आए थे। उन्हें चंद्रगुप्त जैसे एक समर्थ, बुद्धिमान, राष्ट्रप्रेमी नवयुवक की आवश्यकता थी, जिसकी मदद से वे राजा नंद से प्रतिशोध ले सकें। उन्होंने कुछ सोचते हुए कहा, "नहीं महाराज! मुझे केवल एक ही गाय चाहिए। ब्राह्मण को उतनी ही इच्छा रखनी चाहिए, जितनी आवश्यकता हो।"

चंद्रगुप्त ने अपनी दिलेरी दिखाते हुए कहा, ''खेतों में गायें चर रहीं हैं। आपको जो गाय पसंद हों, ले लीजिए।''

चाणक्य ने कहा, "यदि गोरक्षक मुझे रोकें तो?"

चंद्रगुप्त ने कहा, "मगध की सीमा में, चंद्रगुप्त के राज्य में आपको कोई नहीं रोकेगा। चंद्रगुप्त की आज्ञा का उल्लंघन भला कौन कर सकता है? आप निर्भय होकर गाय का चयन कीजिए और उसे अपने साथ ले जाइए।"

चंद्रगुप्त (एक सैनिक बने बालक की ओर इशारा करते हुए)– "सैनिक! ब्राह्मण देवता की सहायता के लिए तुम उनके साथ जाओ।"

चाणक्य सैनिक बने बालक के साथ बाहर निकलते हैं। इसी बीच चंद्रगुप्त की माँ मुरा अपने पुत्र को ढूँढ़ते हुए बरगद के वृक्ष के पास आती हैं। चाणक्य मुरा को बताते हैं कि चंद्रगुप्त की हस्तरेखाएँ बड़ी प्रबल हैं। उसकी शिक्षा की व्यवस्था की जाए। उसका भाग्य अवश्य चमकेगा। मुरा भी यही चाहती थी कि उसके पुत्र की शिक्षा-दीक्षा की उचित व्यवस्था हो, परंतु वह बेबस थी। राजा नंद ने उसके पति को बंदी बना लिया था। चाणक्य की बातें सुनकर, उसके मन में पुत्र के कुछ बनने की भावना का विश्वास फिर से जाग उठा।

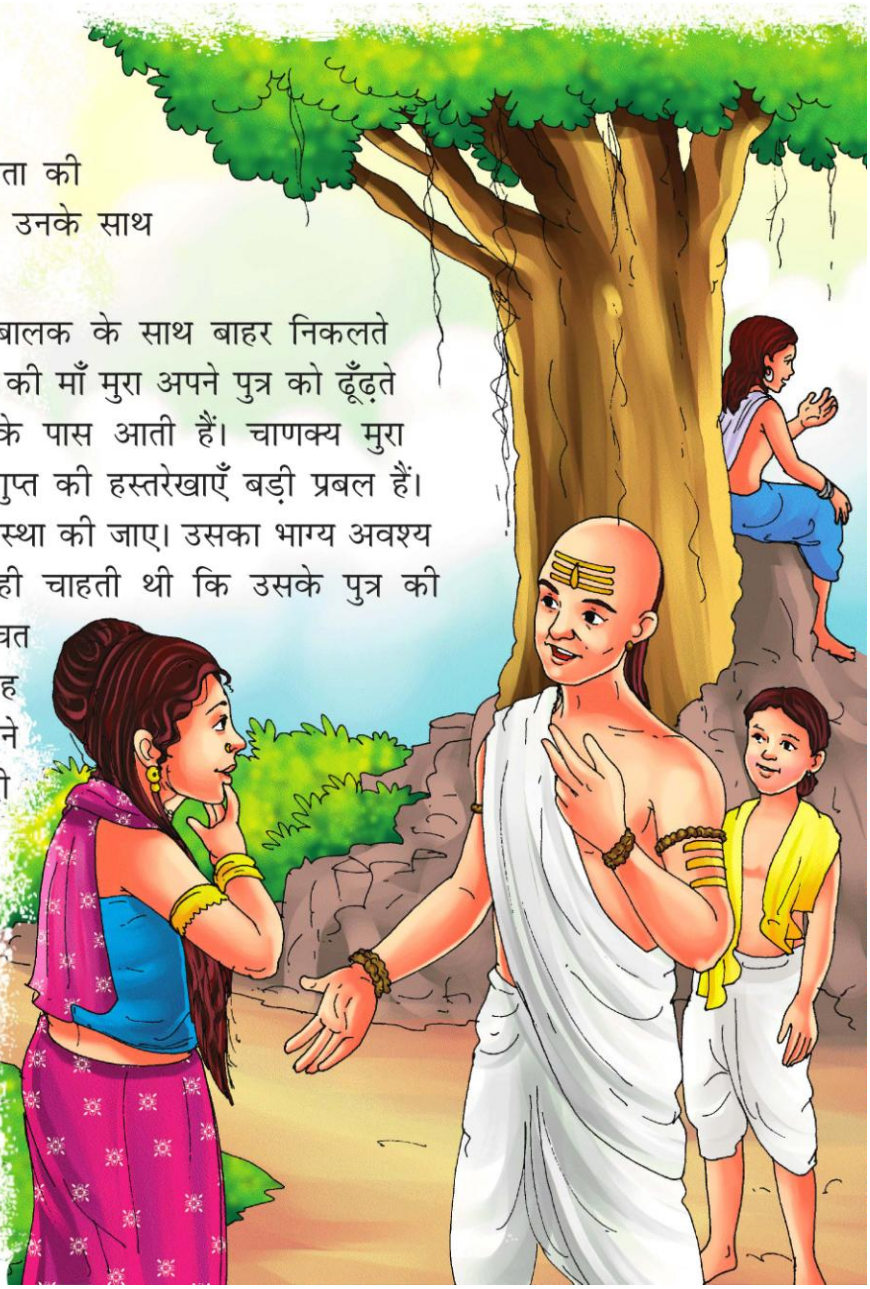

चंद्रगुप्त बचपन से ही बड़े निर्भीक, स्वाभिमानी और बुद्धिमान थे। एक बार मगध के राजा नंद ने अपने दरबारियों, सेवकों तथा देशवासियों की बुद्धि की परीक्षा के लिए एक योजना बनाई। उन्होंने अपनी राजधानी पाटलिपुत्र के राजदरबार में लोहे के पिंजरे में शेर की एक मूर्ति रखवाई और राज्य भर में ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो भी व्यक्ति लोहे के पिंजरे को बिना तोड़े शेर को बाहर निकाल देगा, उसे राज्य की ओर से एक हज़ार सोने की मुद्राएँ दी जाएँगी और उसकी मनचाही माँग भी पूरी की जाएगी। इस सूचना को सुनकर चंद्रगुप्त राजदरबार में पहुँचे। वहाँ जाकर उन्होंने पिंजरे में बंद शेर को अच्छी तरह देखा। दरबार के सभी लोग सिर नीचे किए हुए बैठे थे। बालक चंद्रगुप्त ने बड़े उत्साह से कहा, "महाराज! मैं इस शेर को बाहर निकाल सकता हूँ।" सभी राजदरबारी उस बालक की ओर आश्चर्य से देखने लगे। राजा नंद को भी बड़ा आश्चर्य हुआ। चंद्रगुप्त ने पुनः कहा, "महाराज! मुझे शेर को बाहर निकालने की आज्ञा दें।"

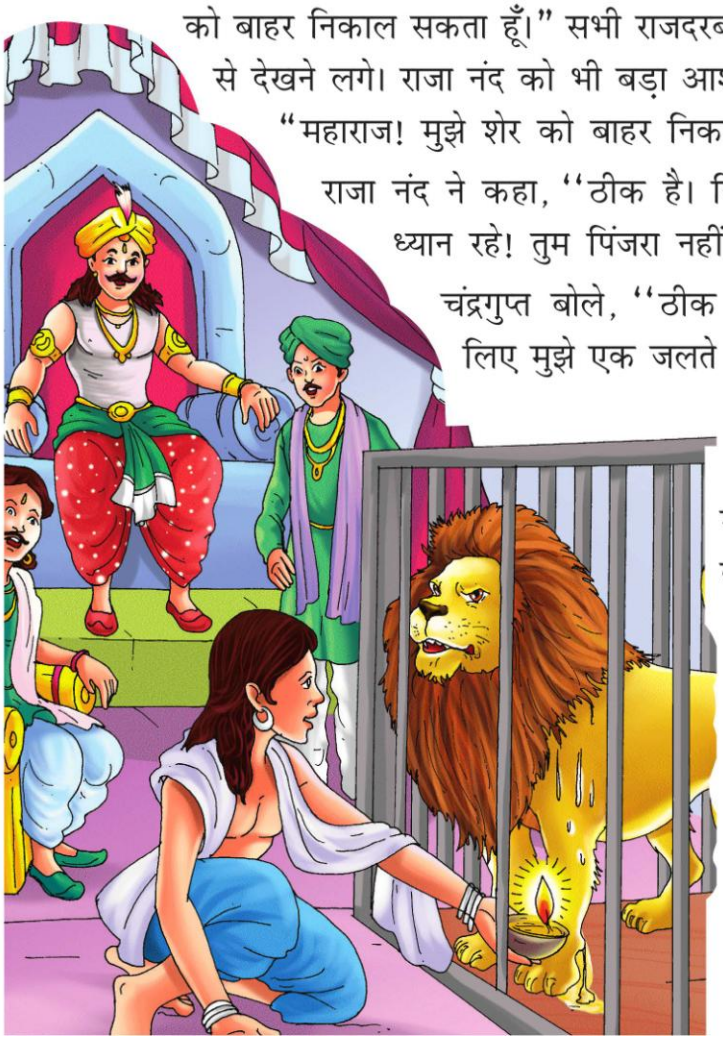

राजा नंद ने कहा, "ठीक है। निकालो शेर को पिंजरे के बाहर। ध्यान रहे! तुम पिंजरा नहीं खोल सकते हो।"

चंद्रगुप्त बोले, "ठीक है महाराज, परंतु इस कार्य के लिए मुझे एक जलते हुए दीपक की आवश्यकता है।"

राजा नंद के आदेश पर जलता हुआ एक दीपक राजदरबार में मँगवाया गया। चंद्रगुप्त ने सलाखों के बीच से दीपक को शेर के पास रखा। मोम का बना हुआ शेर पिघलने लगा। उसकी बुद्धिमानी देखकर सभी हैरान हो गए। राजा नंद ने उसकी प्रशंसा करते हुए उसे एक हज़ार सोने की

मुद्राएँ दी और उसकी मनचाही माँग के विषय में पूछा। चंद्रगुप्त ने मनचाही माँग के रूप में अपने पिता को बंदीगृह से मुक्त कराया। बचपन से ही बुद्धिमानी और साहस दिखाने के कारण उनके लिए यह कहना सही होगा कि– 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात।'

वही बुद्धिमान, तेजस्वी, न्याय प्रिय चंद्रगुप्त काफी समय तक मगध के सम्राट रहे। चाणक्य उनके महामंत्री बने। चंद्रगुप्त के शासन काल में प्रजा सुखी, संपन्न एवं सुसमृद्ध थी। ज्ञान-विज्ञान, वाणिज्य और विभिन्न कलाओं की उन्नति हुई।